RESEARCH METHODOLOGY: 'CHOICE OF SUBJECT'

ऐतिहासिक अनुसंधान: 'विषय का चुनाव'

CHOICE OF SUBJECT

इतिहास के क्षेत्र में शोध-अनुसंधान कार्य प्रारम्भ करने के पूर्व सर्वप्रथम प्रश्न उठता है विषय के चुनाव का। किस भौगोलिक क्षेत्र के किस काल खण्ड में क्या विषय लिया जाय। उदाहरणार्थ, भारतीय इतिहास के प्राचीन, मध्यकालीन, आधुनिक युग के किस शासक या समस्या या ग्रंथ के आधार पर शोध का विषय निर्धारित किया जाय। शोध कार्य किसी चयनित विषय पर बौद्धिक अन्वेषण के द्वारा ज्ञान को विकसित करने हेतु किया जाता है। खोज का अर्थ किसी नवीन आविष्कार का नहीं बल्कि उपलब्ध तथ्यों-तत्वों को नवीन क्रम में स्थापित कर नयी दृष्टि से परीक्षण करके नये निष्कर्षों पर पहुँचने को कहा जाता है। अनुसन्धान अनछुए विषयों पर भी संभव है तथा उन पर भी जिन पर पूर्व में भी शोधात्मक अध्ययन किया जा चुका है। पहले सम्पन्न विषयों पर अन्वेषण कार्य करते समय उनके परीक्षण, अध्ययन, प्रस्तुति में हुई कमियों व ग़लतियों को ठीक किया जा सकता है। अतः अनुसन्धान विधि में विषय के चुनाव की प्रक्रिया सबसे अधिक महत्व रखती है। विषय-चयन के समय शोधार्थी को अनेक पहलुओं पर पहले ही ध्यान रखना होता है।

SELF DECISION

आत्म-निर्णय: शोध कार्य में विषय के चुनाव में स्व-निर्णय को सर्वप्रथम महत्व देना चाहिए। वास्तव में उसी विषय का चयन करना चाहिए जिसमें शोधार्थी की व्यक्तिगत रुचि रही हो। स्नातकोत्तर अध्ययन के समय तक आते-आते हर विद्यार्थी को कुछ विशेष विषय, संदर्भ, प्रसंग, इतिहास ग्रंथ, शासक अपनी ओर खींचते हैं। शोध का विषय स्व-रुचि का होने से आगे अनुसंधान कार्य में गहन रुचि उत्पन्न हो जाती है। जबकि शोध निर्देशक द्वारा सुझाये गये विषय या दूसरों की सलाह पर लिये गये विषय में आगे चल कर अरुचि पैदा हो सकती है। विषय-चयन में पंजीकरण प्रक्रिया प्रारम्भ होने के पूर्व अपने शोध-दिग्दर्शक से सलाह तथा प्रकाश अवश्य लेना चाहिए। अन्य माध्यमों व वरिष्ठ विषय-विशेषज्ञों से भी सुझाव लेना काम आता है, किन्तु विषय-चयन हर हाल में स्व-निर्णय से अधिक उचित सिद्ध होता है। स्व-निर्णीत विषय के शोध कार्य में अन्तःमन का उत्साह बना रहता है तथा अनुसंधाता अपनी सम्पूर्ण प्रतिभा का उपयोग करने में समर्थ हो पाता है।

MATERIAL AVAILABILITY

स्रोत-सामग्री की उपलब्धता: शोध हेतु विषय चुनते समय सर्वाधिक ध्यान-योग्य बिन्दु यह होना चाहिए कि प्रस्तावित विषय पर प्रचुर मात्रा में पाठ्य-सामग्री, साधन-स्रोत, तत्व ग्रंथालयों आदि में उपलब्ध हैं या नहीं। सर्वप्रथम उक्त विषय पर पुस्तकालयों में प्राप्त पांडुलिपियों, पुस्तकों, प्रकाशित लेखों पर विहंगम दृष्टि अवश्य डालनी चाहिए। प्रकाशकों के सूचीपत्रों से, ग्रंथालयों की पंजिकाओं से, अन्य माध्यमों पर उपलब्ध सूचना-सामग्रियों से आश्वस्त हुआ जा सकता है। शोध निर्देशक, दक्ष ग्रंथालयी तथा विषय-विशेषज्ञ भी उपलब्ध सामग्रियों की प्राप्ति-स्थली का संकेत कर सकते हैं। आधुनिक समय में इन्टरनेट के माध्यम से देश-विदेश से प्रकाशित तथा विभिन्न दूरस्थ विश्वविद्यालयों में उपलब्ध उपयोगी सामग्री का पता चल सकता है।

विषय से सम्बद्ध भाषा-ज्ञान: विषय-चयन में विशेषकर इतिहास के शोधार्थी को सजग होना चाहिए कि प्रस्तावित विषय के भावी अध्ययन

में उपलब्ध सामग्री, पुस्तकों, तत्वों, साक्ष्यों की भाषा का उसे समुचित ज्ञान हो। उदाहरणार्थ प्राचीन भारत के अध्ययन हेतु संस्कृत की जानकारी जरूरी है, मध्यकालीन भारतीय इतिहास पर शोध हेतु फ़ारसी का ज्ञान आवश्यक है तथा आधुनिक भारत पर शोधार्थी को अंग्रेज़ी आना अनिवार्य है। बौद्ध कालीन इतिहास पर अध्येता को पाली निश्चित आनी चाहिए, जैन इतिहास के अध्ययन के लिए प्राकृत अपरिहार्य है। दक्षिण भारतीय विषय पर शोध हेतु तमिल, तेलुगू या कन्नड़ ज्ञात होनी चाहिए; मराठों के इतिहास हेतु मराठी, पूर्वोत्तर के इतिहास हेतु असमी, राजपुताना के इतिहास हेतु राजस्थानी का ज्ञान ज़रूरी है। अब तक अनेक मूल ग्रंथों का अनुवाद हिन्दी-अंग्रेज़ी में नहीं हुआ है, अनेक अप्रकाशित पांडुलिपियाँ, बहियाँ, पोथियाँ, बस्ते विभिन्न पुस्तकालयों व व्यक्तिगत संग्रहों में पड़े हैं। अनुवादों के आधार पर किये गये शोध कार्य को कभी भी मौलिक प्रतिष्ठा नहीं मिलती; अतएव गम्भीर शोधार्थी को विषय-चयन के पूर्व अपने भाषा-ज्ञान का भी अवश्य ध्यान रखना चाहिए।

KNOWLEDGE OF LANGUAGE

प्रकाशित समीक्षाओं पर दृष्टिपात: इतिहास के शोधार्थी को विषय-चयन के पूर्व प्रकाशित विभिन्न ऐतिहासिक शोध पत्रिकाओं एवं संग्रहीत समीक्षाओं का ध्यानपूर्वक अध्ययन कर लेना चाहिए कि उक्त विषय पर पूर्व में किन-किन दृष्टियों से शोध किया गया है, किन समस्याओं की व्याख्या की जा चुकी है या किन स्रोतों का प्रयोग किया गया है। अनुसन्धाता को जानना आवश्यक है कि प्रस्तावित विषय के किन पहलुओं पर उसे दृष्टिपात करना है, किस कोण से क्या कुछ छूटा है। समीक्षाओं में समीक्षक इंगित करते हैं कि उक्त विषय पर उपलब्ध पूर्व के अध्येताओं ने क्या-क्या पाया है और उनसे क्या-क्या छूटा है। उदाहरणार्थ किसी शासक के युग का यदि राजनीतिक व सामरिक इतिहास उपलब्ध है तो सामाजिक या आर्थिक पहलू अभी अछूता है। क्या किसी भाषा विशेष के ग्रंथ का उपयोग अछूता रह गया है। क्या किसी संदर्भ पर कोई नयी सामग्री, तथ्य, तत्व निकट-पूर्व में सामने आये हैं जिनके प्रयोग से नवीन इतिहास उजागर हो सकेगा। प्राचीन इतिहास के विषय में तो उत्खनन से नवीन आयामों का खुलना सम्भव हो जाता है।

STUDY OF REVIEWS

सन्तुलित विस्तार: ऐतिहासिक शोध हेतु प्रस्तावित विषय में नियन्त्रणीय अनुपात का होना बेहद ज़रूरी है। विषय-चयन में ये ध्यान रहे कि निश्चित समय-सीमा में शोध कार्य सम्पन्न होने की संभावना हो अन्यथा अनावश्यक विस्तार से भविष्य में कठिनाइयाँ उत्पन्न होंगी। उदाहरणार्थ सन्दर्भ की क्षेत्र-सीमा निश्चित करनी चाहिए तथा काल-सीमा भी इतनी दीर्घ न हो कि शोधार्थी कार्य समेट न पाये। उदाहरणार्थ बौद्ध धर्म-दर्शन का विस्तार तो एशिया भर में हुआ तथा बुद्ध से लेकर अशोक और उसके परवर्ती युग तक उसका प्रचार-प्रसार हुआ; तो शोधार्थी को भौगोलिक खण्ड चुनना होगा तथा सौ-दो सौ वर्ष उस काल-खण्ड में तय करना होगा, अन्यथा शोध प्रबन्ध कभी पूर्ण न हो सकेगा। शोध कार्य को संतुलित रूप में आरम्भ करना चाहिए तथा उपलब्ध स्रोत-सामग्री के अनुरूप विस्तार में जाना चाहिए। भूगोल अथवा काल की दृष्टि से यदि विषय सीमित न होगा तो अरुचिकर एवं अनिश्चित हो जायगा; अतः विषय-चयन में नियन्त्रणीय अनुपात आवश्यक है।

BALANCED PROPORTION

ऐतिहासिक अनुसन्धान में शोधार्थी को विषय-चयन के समय तुलनात्मक अध्ययन से परसक बचना चाहिए क्योंकि इसके लिए त्रिस्तरीय ज्ञान अनिवार्य है। यदि दो शासकों, युद्धों, शासन प्रणालियों का तुलनात्मक विषय लिया जाता है तो उनके बारे में अलग-अलग हरएक

TO AVOID COMPARATIVE TOPIC

से सम्बद्ध काल एवं परिस्थितियों का गहन शोध अपरिहार्य हो जाता है। इसके बाद दोनों
का तुलनात्मक अध्ययन हो पाता है। इस प्रकार का शोधकार्य तीन भागों में बट जाता
है। ऐसे विषय के चुनाव में भावी अध्ययन बड़ा श्रमसाध्य व दुष्कर होता है तथा नये
शोधार्थी के लिए बड़ी चुनौती होती है। उदाहरणार्थ शेरशाह और अकबर के शासन-
प्रबंधों का तुलनात्मक अध्ययन : इसमें मुगल शासन प्रणाली को मध्य एशियाई
पृष्ठभूमि में अकबर के विस्तृत साम्राज्य विस्तार एवं उसके नितान्त व्यक्तिगत
सिद्धान्तों के साथ-साथ शेरशाह की पठान पृष्ठभूमि व सूर वंश की सर्वथा पृथक
नीतियों के संदर्भ में तौलना होगा जो एक नवोदित अनुसंधाता के लिए बेहद विशाल
कलेवर में डूबने जैसा होगा। अतः ऐसा विषय-चयन श्रेयस्कर नहीं।
विश्व इतिहास महासागर है, उसमें भी भारत का इतिहास अपने आप में अति विराट
है। भारतीय इतिहास के तीनों कालखण्ड विपुल सामग्रियों के साथ अगणित घटनाएँ
समेटे हुए हैं। यही नहीं प्राचीन समय में बृहत्तर भारत की एक सांस्कृतिक सीमा दक्षिण-
पूर्व एशिया में फैली थी। इतिहास लेखन में अनेक देशी-विदेशी भाषाओं में विपुल
साहित्य भरा पड़ा है। ऐसे में इतिहास के शोधार्थी को विषय-चयन से पूर्व सावधानीपूर्वक
स्व-निर्णय करना चाहिए; शोध निर्देशक से प्रकाश लेना चाहिए, साहित्यिक सामग्रियों की
उपलब्धता की जानकारी करनी चाहिए, शोध-विषय नियन्त्रणीय अनुपात में माप लेना
चाहिए, अपने भाषा-ज्ञान के अनुसार चयन करना चाहिए, तुलनात्मक अध्ययन से यथा-
संभव बचना चाहिए और प्रकाशित समीक्षाओं को ठीक प्रकार से देख-समझ कर ही
अपने शोध का विषय चुनना चाहिए।

महीमा प्रसाद (margin, red)

[signature]

[signature]